## चौथा अध्याय

# मार्कण्डेय के कथासाहित्य में संस्कृति एवं धर्म

# चौथा अध्याय
# मार्कण्डेय के कथासाहित्य में संस्कृति एवं धर्म

संस्कृति शब्द का व्यापक अर्थ है। इसके तहत मानव जाति की तमाम सामाजिक चेतना समाविष्ट है। संस्कृति समाज को प्रगति की ओर ले जानेवाली शक्ति है। यह बेहतर सामाजिक जीवन के लिए व्यक्ति मन को उच्च विचारों से रूपायित करती है। डॉ. नगेन्द्र के राय में "संस्कृति जीवन के उन सूक्ष्मतर तत्वों की संहिता का नाम है जिससे मानव चेतना का संस्कार होता है।"[1] यानी आचार-विचार तथा सामाजिक गतिविधियों को श्रेष्ठ रूप देना संस्कृति का मकसद होता है। संस्कृति के रूपायन के संबन्ध में डॉ. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी का मत कुछ इस प्रकार है कि "आर्थिक व्यवस्था, राजनीतिक संघटन, नैतिक परम्परा और सौन्दर्य बोध को तीव्रतर करने की योजना, सभ्यता के चार स्तम्भ हैं। इन सबके सम्मिलित प्रभाव से संस्कृति बनती है।"[2] संस्कृति प्रवाहमय होती है। प्रत्येक काल की संस्कृति की अपनी-अपनी खासियतें होती हैं, जो तत्कालीन समाज से प्रभावित हैं।

भारतीय संस्कृति का मूल रूप ग्रामाँचलिक जीवन में ही प्राप्त है। स्वातंत्र्योत्तर ग्रामांचलों में सांस्कृतिक परिवर्तनों की गति तीव्र हुई है। स्वातंत्र्योत्तर ग्रामीणों में

---

1. डॉ. नगेन्द्र - नई समीक्षा नए संदर्भ - पृ. 79
2. डॉ. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी - अशोक के फूल - पृ. 81

शिक्षा का प्रचार, प्रजातांत्रिक सरकार में भागीदारी, गाँधीवाद और मार्क्सवाद का सम्मिश्रित प्रभाव परिलक्षित हैं जिससे ग्रामीणों में बौद्धिकता का समावेश होता गया। नवीन चेतना ने नवीन संस्कृति के ताने-बाने बुनने लगे। हाँलांकि शहरों की तरह गाँव में प्राचीनता के प्रति अविश्वास तथा आध्यात्मिक शक्तियों के प्रति असंतोष नहीं हुआ है। फिर भी गाँव में विवाह तथा संयुक्त परिवार सम्बन्धी धारणाएँ परिवर्तित हो गई है। अन्तर्जातीय विवाह तथा विधवा विवाह की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट हुआ है। दरअसल स्वातंत्र्योत्तर ग्रामीण संस्कृति धीरे-धीरे आधुनिकता के रंग में रंगती जा रही है।

किसी भी देश की संस्कृति को समझने के लिये वहाँ के कला और साहित्य को जानना ज़रूरी होता है। मनुष्य के मानसिक विकास के विविध आयामों में संस्कृति अपना विस्तृत रूप धारणा करती है, जिसे प्रकाश में लाने का कार्य साहित्य करता है। मार्कण्डेय के कथा साहित्य में पूर्वी उत्तर प्रदेश के ग्रामांचलिक सांस्कृतिक जीवन बखूबी से उतारा गया है।

## 4.1 ग्रामांचलिक जीवन की सांस्कृतिक आयाम

उत्तर प्रदेश के पूर्वांचलों की सांस्कृतिक जीवन को समझने के लिए वहाँ के रहन-सहन, रीति-रिवाज़, प्रकृति से जुडी जिन्दगी, सहयोग की भावना, त्यौहार, लोकगीत आदि से गुज़रना ज़रूरी होते हैं।

### 4.1.1 प्रकृति से जुडी ज़िन्दगी

गाँव की प्राकृतिक खूबसूरती मन को मोह लेती है। दूर-दूर तक लहलहाते हुए हरे-भरे खेत और चारों तरफ रंग-बिरंगे फूल तथा चहचहाते हुए पक्षी ग्रामांचलों की खासियत है। प्रकृति से मिल-जुलकर जीना गाँव की संस्कृति है। गाँववालों ने प्रकृति के विभिन्न स्वरूपों एवं शक्ति से चकित, प्रसन्न एवं कृतज्ञ होते हैं। वृक्षों को सींचकर और नदियाँ तथा भूमि की पूजा करके वे लोग प्राकृतिक शक्तियों को प्रसन्न करने का प्रयत्न करता है।

#### 4.1.1.1 कृषक जीवन

अंचल के ज्यादात्तर लोग किसान हैं। वे प्रकृति से मिल-जुलकर जीना पसंद करते हैं। अपनी ज़मीन यानी खेत उनकी खुशी और प्रतिष्ठा की प्रतीक होती है। खेती करना उनके लिए सिर्फ आजीविका अपनाने का मार्ग नहीं है, बल्कि उनकी संस्कृति है। यह संस्कृति किसान को प्रकृति के साथ एकता स्थापित करने की प्रेरणा देती है।

मार्कण्डेय की 'दौने की पत्तियाँ' नामक कहानी का भोला एक बीघा ज़मीन का किसान है। उसे अपनी ज़मीन पर गर्व महसूस होता है। भोला ने बेहद परिश्रम करके उस जमीन को हरा-भरा बना दिया है - "एक बीघे पतले लम्बे नहरी खेत के एक सिरे पर भोला की यह सृष्टि गाँव की दुलहिन के नाम से पुकारी जाती है। यही भोला का राज है। एक ओर साग भाजी का कोइरार और दूसरी ओर एक

झोंपडी। उसके आगे एक छोटा सा आँगन। आँगन के चारों ओर एक चौडी मेड़, जिसकी नाली में मर्सा, मकोय, तुलसी और दौने से लेकर वैजंती, रातरानी और गुलदावरी के पौधे लहलहाते रहते हैं।"[1] भोला ने ऊपर से नीचे तक उस नीम के पेड़ को निहारा - "पाँच ही बरस हुए इसे लगाये, लेकिन कैसा छितनार हो चला है। गाँव में किसके पास इतना सुन्दर नीम का पेड़ है। डालियाँ जैसे धरती को चूमने बढ़ी आ रही हैं।"[2] इससे जाहिर होता है कि किसान की जिन्दगी प्रकृति से गहराई से जुडा हुआ है।

किसानी संस्कृति में पृथ्वी यानी ज़मीन को माता या देवी मानने की परंपरा है। उनके लिए अपनी ज़मीन का मूल्य सिर्फ आर्थिक नहीं है बल्कि सांस्कृतिक भी है। उसे अपनी पुश्तैनी ज़मीन पर गर्व है। वह जीने की आस्था है। 'भूदान' कहानी के जरिए मार्कण्डेय ने यह दिखाया है कि किसान अपनी ज़मीन के लिए मर-मिट सकता है। नीलहे साहेब चेलिक का ज़मीन खरीदकर वहाँ नील की कृषि करना चाहता है। चेलिक ज़मीन नहीं देना चाहता है। उसके लिए अपनी ज़मीन माँ के समान है - "चेलिक अपनी भूँय नहीं देता। क्यों दे वह अपनी धरती। धरती और मेहरारु कोई किसी को देता है।"[3] नीलहे साहब उसकी ज़मीन जबरदस्ती से छीनना चाहता है। चेलिक अपनी पुश्तैनी ज़मीन के लिए संघर्ष करता है - "सारा गाँव चेलिक को समझा रहा है, काहे को विपत लेते हो सिर पर, काहे लड़ते हो, पर

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 199
2. वही - पृ. 199
3. वही - पृ. 272

नहीं, तो नहीं। चेलिक पकड़ा गया और उसके चमड़ों में बाँस की खपच्चियाँ, पीठ पर हंटर, कमर पर लकडी का कुन्दा, बेहोश हो गया। मुँह से फेंचकुर आने लगा। पर भूँय तो भूँय। धरती है माता, माता को कैसे दें।"[1] आखिर चेलिक के मोह और त्याग ने उस लड़ाई को जीता लिया। अपनी माँ समान ज़मीन उसके पास सुरक्षित रहा।

### 4.1.1.2 स्त्री और प्रकृति

शहर में लोग अपनी सुख-सुविधाओं के लिए प्रकृति को तबाह कर रहें हैं। पर ग्रामांचलिक लोग उसकी रक्षा के लिए जीवन समर्पित कर रहे हैं। खासकर ग्रामीण औरत प्रकृति के साथ एकता स्थापित कर जीना चाहती है। प्रकृति के चर-अचर से उसे ममता है। यह ग्रामीण औरत की जीवन पद्धति और ग्रामीण संस्कृति की खासियत है।

'महुए का पेड़' नामक कहानी प्रकृति और ग्रामांचलिक औरत के पवित्र रिश्ते की अभिव्यक्ति करती है। कहानी की दुखना के लिए आंगन का महुए का पेड़ अपना सब कुछ है - "महुए के पेड़ से उसका बड़ा निकट सम्बन्ध है। उसे दुखना ने अपने हाथ से लगाया है, सींचा है और देख-रेख कर इतना बडा किया है। अब उसकी उम्र पचास वर्ष की हो रही है। दुखना कभी उसे अपना बच्चा समझती थी, पर अब उसके विशाल पौरुष की छाया के नीचे, अपने को रक्षित समझती है।"[2]

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 272
2. वही - पृ. 131

महुए का पेड़ का सौन्दर्य दुखना के लिए सुखद होता है। वह उसकी जिन्दगी की नयी आस्था बन जाती है - "रात को जब उजली, धूली चाँदनी की चादर, धरती पर फैल जाती और उस विशाल महुए की नंगी-नंगी डालें और उनमें से निकली हुई नन्हीं-नन्हीं, बिना पते की टहनियों के झोपों से एक-एक फूल टपकता, तो दुखना को लगता, जैसे रेशम की पतली धारियों से स्वर्ग के दूत, उसके आगे मोतियों की वर्ष कर रहे हों। वह एकटक, बहुत सी प्यारी आँखें से देखती-देखती, देर तक अपनी मडई के आगे बैठी रहती।"[1] गाँव की ठाकुर की नज़र उस पेड़ पर है। इसलिए दुखना दिन-रात उस महुए के पेड़ की रखवाली करती है। वह हमेशा चिंतित रहती है कि ठाकुर महुए के पेड़ को काट जाऐंगे। दुखना तीर्थयात्रा पर जाना चाहती है। पेड़ की चिंता उसे रोकती है। इस कहानी से जाहिर होती हैं कि ग्रामीण औरत अचेतन में भी चेतनता का आभास देख सकती है। वह पेड-पौधे को पुत्र-तुल्य प्यार कर सकती हैं। उसकी रक्षा के लिए अपनी ज़िन्दगी की खुशियों को कुर्बान कर सकती है।

ग्रामीण औरत के लिए घर का जानवर अपनी बच्चों की तरह प्यारा होता है। उसकी नज़र में वह सिर्फ खेती करने के लिए सहायक जानवर नहीं है। उसकी देख-रेख वह खुशी से करती है। मार्कण्डेय की 'सवरइया' नामक कहानी इस तथ्य को बखूबी से उकेरता है। कहानी महाराजिन नामक ग्रामीण औरत का अपने बैल के प्रति लगाव को प्रस्तुत करता है। पति के मृत्यु के बाद पट्टीदार ने महाराजिन

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 132

की खेतीबाडी छीन लेता है। वह आर्थिक रूप से पूरी तरह टूट जाती है। आगे पट्टीदार रुपये के बदले उसका बैल स्वरइया को माँगता है। तमाम कठिनाईयों के बीच भी संभालकर रखे पति की आखिरी निशानी शीशाफूल को गिरवी रखकर वह सवरइया को बचाने की कोशिश करती है। अकेलेपन में उस बैल ही महाराजिन का जीने की आस्था बन जाता है। वह अपनी सुख-दुख उससे बाँटती है। महाराजिन देर तक अपने बैल से बात कर रहती है - "बडा बदमाश है रे तु... नहीं जानता, महाराज के मरने के बाद मुझे जगह-जमीन से महरुम करके इन सबों ने अलग कर दिया, केवल पाँच ही बीघे तो दिये हैं। और तु... तेरे ऊपर तो बडी आँख थी इन कमीनों की।... बार-बार तुझे माँगते हैं, रुपया देने को कहते हैं। पर तुमें नहीं दूँगी, मेरे लाल।"[1]

ग्रामीण नारी के लिए पृथ्वी को उर्वरता प्रदान करनेवाली नदी, तालाब सब पूज्य है। 'अग्निबीज' उपन्यास में रामपुर अंचल के औरत बजमा तालाब की पूजा करते है। बरसात के दिनों तालाब का पानी मंदिर की सीढ़ी छूते ही औरतें गाते-बचाते तालाब की पूजा करती है-

"बजमा हथवा कगनवाँ मैं लायी होना।
बजमा मंगिया सेंधुरवा मैं लाई हो ना।।
बजमा मथवा टिकुलिया मैं लाई हो ना।"[2]

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 23
2. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 17

गाँव की औरतें घर के शूभ-कार्य के लिए मिट्टी उस तालाब से ही लेती हैं - "लड़कियाँ तो बजमा की मनौती मनाती हैं। वह आज भी नाचती-गाती कजरी की जरई की मिट्टी के लिए बजमा में ही जाती हैं। उनकी शादी के लिए भी मिट्टी बजमा से ही आती है।"[1] इस तरह ग्रामांचलिक औरतों की जिंदगी प्रकृति से सीधा जुडा हुआ है।

### 4.1.2 सहयोग की भावना

ग्रामीण संस्कृति कि खासियत है कि वहाँ के लोग एक दूसरे के सुख-दुख में शामिल होते हैं। विपत्ती के मौके पर दुश्मनी भूलकर एक-दूसरे की मदद करते हैं। गाँव की इस सांस्कृतिक विशेषता का जिक्र मार्कण्डेय ने 'अग्निबीज' नामक उपन्यास में किया है - "गाँव में ऐसी स्थितियाँ सारी दोस्ती दुश्मनी से आज भी ऊपर मानी जाती है। किसी की लड़की की शादी हो, कोई बीमारी हो, किसी पर विपत्ती पड़ी हो तो लोग दुश्मनी भूलकर शामिल होते हैं। ऐसे मौकों पर दुआर करने न आनेवालों को नीच और कमीना मानते हैं।"[2] उपन्यास में ज्वाला सिंह के तमाम बुराईयों के बावजूद उसके बेटे की बीमारी के समय पूरा गाँव घर इकट्ठा हो जाता है। साथो काका और मुसई जैसे अनेक लोग ज्वालासिंह के शोषण का शिकार है। हाँलांकि उनके बेटे सुनीत की बीमारी की बात सुनते ही वे उसके घर जाते हैं - "साधो काका बरसों बाद बडकी बखरी के दालान में आ जा रहे थे।

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 17
2. वही - पृ. 54

दालान के लम्बे ओसरे में एक तरफ पडे तखत पर उनकी कमरी दोहरी बिछी थी। वे वहीं लेट जाते थे। ....मुसई कुछ दूर, पाये के सहारे ज़मीन पर चुपचाप बैठे रहते, फिर उठकर चले जाते थे। इतनी बडी घटना के बाद भी मुसई का वहाँ जाना कुछ अजीब लगता था लेकिन गाँव में ऐसी स्थितियाँ सारी दोस्ती-दुश्मनी से आज भी ऊपर मानी जाती हैं।"[1] श्यामा की शादी भी पूरे रामपूरवासियों के सहयोग से चलता है - "बेचन बखरी का दालान सजाने में जुटा था। वह सारा सामान जो ज्वाला बाबू के न रहने पर उठा कर अन्दर रख दिया जाता था, बाहर निकाल कर सजाया जा रहा था। इस काम में कोई खोट न रह जाये, इसे देखने के लिये चन्दा बहु दालान में आयी थीं और फर्श तथा ओगालदान वहाँ न पाकर, बेचन को डाँटकर वापस चली गयी थीं। डबलबेड की चादरें और कुर्सियों के कवर बदल दिये गये थे। बिरंगी बाहर से आयी कालीनों पर नाम लिख रहे थे। अडोस-पडोस के सारे कहारों को काम पर लगा दिया गया था। ...शादी का सारा खर्च और ज़ेवर देने की बात मूरत महाराज ने मान ली थी.... बाकर श्यामा के लिये एक धोती बिन रहा था।"[2] गाँव के सारे लोग छोटे-बडे के भेद भूलकर शादी में अपना-अपना सहयोग देते हैं।

मार्कण्डेय की 'गुलरे का बाबा' कहानी भी आपसी प्रेम एवं सौहार्द की परिचय देती है। बाबा दिन-रात गुलरा के पेडों की सेवा में लगे रहते हैं। गाँव का चैतु अहीर उनके गुलरे से सरपत काटता है। बाबा के मना करने पर भी चैतु

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 54
2. वही - पृ. 155

सरपत काटने की जिद करता है। बाबा उसके ऊपर नाराज़ नहीं होते हैं बल्कि उसे शक्ति प्रदर्शन करने के लिए बुलाते है। शक्ति प्रदर्शन में चैतु हार जाता है। बाबा जब चैतु के घायल होने का खबर सुनते हैं तो जल्दी ही उसके घर जाकर उसकी सेवा में जुट जाते हैं - "बाबा ने हाथ लगाया थोडा तेल तो लाओ और यह दवाई जरा पीस लेना। उन्होंने देखा, चोट बडी बेतुकी थी। चैतु को पट्ट सुला दिया, फिर तेल लगा कर माँजते-माँजते एक-एक पैर लगा कर उन्होंने चैतु की टाँगें हाथ से उठा दीं। चट की आवाज़ हुई और चोट ठीक हो गयी। हड्डी बैठ गयी। बाबा ने दवा गरम करवायी और चोट पर बाँध दिया।"[1] बाबा ने यह नहीं सोचा कि वहीं चैतु जिसने उसकी बात को टालकर, उनकी शक्ति प्रदर्शन के चुनौती को स्वीकार किया था। चैतु के घर का टूटा छप्पर देखकर बाबा दुखी हो जाते हैं। दूसरे ही दिन बाबा चैतु के घर में नया छप्पर बनाने के लिए गुलरे से सरपत काटने का आदेश मज़दूरों को देते हैं - "बडे सबेरे जब पलाशों की लाली पर सूरज की किरणों एक-एक कर उतर रही थीं - गुलरा की सरपत में पच्चीस मज़दूर लगे थे - कटाई हो रही थी। सुखई ने पूछा, "क्या होगी सरपत, बाबा?" "चेतुआ की छान्ह टूट गयी है रे।" बाबा ने उत्साह से कहा।"[2] विवेकी राय के अनुसार - "गुलरा के बाबा में जो आदर्शवादी उभार है वह सांस्कृतिक अधिक है।"[3] अंचलवासियों का मन उतना कठोर नहीं होता है। गाँव में आपसी प्रेम एवं सहयोग के तहत रिश्ता मजबूत होता

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 9
2. वही - पृ. 9
3. विवेकीराय - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य और ग्राम जीवन - पृ. 241

है। दरअसल लोगों के बीच के एकता एवं सहयोग की भावना ग्रामीण संस्कृति की खासियत है।

### 4.1.3 रहन-सहन, खान-पान एवं रीति रिवाज़

लोगों के रहन-सहन खान-पान, वेशभूषा तथा रिवाज़ वहाँ के प्राकृतिक परिवेश पर आधारित होती है। आगे उसका पहनावा, खानपान उसकी संस्कृति का अंश बन जाते हैं। गाँवों में लोगों का आर्थिक तथा जातिगत स्तर के तहत उनके पहनावे और खानपान में अलगाव दिखाई देता है। मार्कण्डेय के कथा साहित्य के ज़रिए उतर प्रदेश के पूर्वांचलों की जीवन रीति की जांच करेंगे।

#### 4.1.3.1 वेशभूषा

वेशभूषा का संस्कृति तथा सभ्यता से गहरा संबन्ध होता है। लोगों की वेशभूषा के आधार पर उन की सांस्कृतिक खासियतों को पहचाना जा सकता है। ग्रामांचलिक लोगों की वेशभूषा में सादगी दिखाई देती है। आमतौर पर पुरुष धोती-कुर्ता और पायजामा पहनते है तथा स्त्री साडी, चोली पहनती हैं।

'हंसा जाई अकेला' में लेखक ने हंसा की वेशभूषा का वर्णन यों किया है - "घुटने तक की धोती और मारकीन का दुगजी गमछा उसका पहनावा है। वैसे उसके पास एक दोहरा कुर्ता भी है, पर वह मोके-झोंक या ठारी के दिनों में ही निकालता है।"[1] 'सोहगइला' नामक कहानी में पूर्वांचलों की शादी के पहनावा का

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 211

वर्णन हुआ है। रनिया की शादी हो रही है। वह अपने पहनावा को देखकर खुश हो जाती है - "इस भीड़-भाड़ में मौका ही कब मिला था उसे अपनी लाल चुनरी और झब्बा-तिलरी, बाजू-बरेखी देखने का। उसने खटोली में अपने को अकेला पा कर, एक बार इधर-उधर देखा, फिर एक आँख से सोहगइला सीने से दबा कर, सुहाग के घूँघरुदार आँचल को हटाया।"[1] 'चाँद का टुकडा' में भी शादी के पहनावे का चित्रण मिलता है - "याद आती थी दुलारी, सुहाग के सपनों में डूबी हुई - पीले हाथ-पाँव वाली भोली दुलहिन, जिसके माथे पर चाँदी के इको झूल रहे थे - जिसके हाथों में बाजू की घुंडी लटक रही थी।"[2]

'अग्निबीज' उपन्यास में हरिजन पाठशाला के उद्घाटन समारोह में लोग इकट्टे हुए हैं। इस प्रसंग में मार्कण्डेय ने वहाँ इकट्टे लोगों की वेश-भूषा का वर्णन किया है - "सुनीत ने साफ, धुला हुआ, बारीक खादी का कुर्ता-पायजामा पहिन रखा था। ....मुराद जल्दी में अन्दर घुसा... उसने आधी बाँह का गज्जी का छोटा कुर्ता और दोकछी ऊँची धोती पहिन रखी थी।"[3] उद्घाटन समारोह में जाने के लिए श्यामा भी तैयार हो रही थी - "श्यामा बिसेसर की बात सुनते ही दौड कर अपनी कोठरी में गयी। सफेद ज़मीन पर नन्हीं-नन्हीं हरी बूटियों वाली खद्दर की धोती और एक सफेद कुर्ते ले कर बाहर आयी, 'मेरे हाथ के कते सूत के बदले मिला है - काका, देखो इसे! मैंने अपने लिए एक धोती और तुम्हारे लिए यह कुर्ता लिया है।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 194
2. वही - पृ. 226
3. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 99

इसे पहन कर आश्रम पर आना।"[1] इससे जाहिर होता है कि ग्रामीणों में गाँधीजी के खादी के प्रचार का प्रभाव है। वे लोग अपने हाथ से बुनाया और सिलाया वस्त्र पहनते है। अंचलवासियों के पहनावे में सादगी और सहजता है।

### 4.1.3.2 खान-पान

ग्रामीणों के भोजन में गेहूँ, जौ और चावल तथा साक-सब्जियाँ शामिल है। दूध तथा दूध से बनी हुई दही, मक्खन, छाछ आदि का उपयोग भी भोजन में किया जाता है। खास मौके पर जैसे विवाह तथा पारिवारिक समारोह पर लोग तरह-तरह के खाना बनाते हैं।

ज्यादातर अवाम के घर गुड़ और पानी ही पीने के लिए होता है। 'धुन' कहानी का नाथू के घर में ऐसा ही है - "नाथू पग उठाने ही जा रहा था कि भगेलू की माँ पीतल के लोटे में पानी और गुड़ का एक टुकड़ा लिये आ पहुँची।... वह गुड़ का ढोंका मूँह में डाला और गट-गट पानी पी गया।"[2] 'दाना-भूसा' के बसन का परिवार भी गुड़ का रस से दिन गुज़रता है - "बाँकी रुआसी सी गुड़ की ओर देखती रही और बंसन जैसे सब कुछ समझ कर जल्दी से गुड़ में पानी मिला कर बटुली में शरबत बनाने लगा।"[3] 'बातचीत' कहानी के चौथी दादा गाँव के खान-पान के संबन्ध में कहते हैं कि - "क्या खाना-पीना होगा भइया। ...यही रस दाना

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 98
2. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 404
3. वही - पृ. 319

पर कट जाती है। ...पतोहुओं ने किसी दिन दया दिखाई, तो दाने को पीस-पीस कर बुकनी बना दी, नहीं तो रस ही पी कर रह जाना पड़ता है।"[1] इससे जाहिर होता है कि गरीबों के घर रस-दाना से ही कट जाते हैं।

'अग्निबीज' में बाकर के घर में खाने के लिए रोटी और दूध रहता है - "मुराद ने तवा उठाकर मोटी-रोटी निकाली और नमक प्याज़ से खाने लगा। मुराद को स्कूल से लौटने के बाद इसी तरह सदा तवे के बीच ढंकी एक रोटी रखी मिलती थी। वह गुड़ से रोटी खाना पसन्द करता था। ...बाकर मुराद के आते ही किसी बकरी से उसके लिए थोड़ दूध निकाल देता था।"[2] गाँव में ठाकुरों के घर खाने-पीने के लिए दही, दूध और मक्खन होते हैं। 'उत्तराधिकार' कहानी का ठाकुर जोगेश सिंह की कोठरी में स्वादिष्ट भोजन होता है। ठाकुर की पत्नी घर के पहलवान तक के लिए बादाम का दूध देती है - "राजू पहलवान के लिए सुबह घी में डुबे हुए बादाम के हलुए की तश्तरी भेजना उसकी बडी अम्मा नहीं भूलती...."[3]

'अग्निबीज' में मार्कण्डेय ने गाँव में शादी के दावत का वर्णन यों किया है - "किसानों के यहाँ शादियाँ फसल की कटाई के बाद गर्मियों में ही होती हैं और दूर-दूर से धूप और लू में पैदल चल कर लोग शादियों में शामिल होने आते हैं। इसलिए सभी आगन्तुकों को जलपान कराने की प्रथा शुरू हुई। धीरे-धीरे उसमें बारीकियाँ निकलने लगीं। फिर लोगों ने उसे प्रतिष्ठा से जोड़ दिया। गुड़पानी की

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 209
2. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 24
3. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 407

जगह मिठाई - नमकीन ने ले ली और बात बढ़कर बर्फ-मिली लस्सी तक पहुँच गयी।"[1]

### 4.1.3.3 रीति-रिवाज़

रीति-रिवाज़ के तहत सामाजिक जीवन गतिशील और संचरित होता है। "आचार व्यवहार के नियम ही कालान्तर में रिवाज़ बन जाते हैं और रीति-रस्म के रूपों में सामाजिक परम्पराओं में अपना अस्तित्व सुरक्षित रखते हैं।"[2] ग्रामीण परंपरा से चले आ रहे रिवाज़ों का पालन खुशी से करते हैं।

गाँव में आज भी ऐसा रिवाज़ कायम है कि शादी पर जाते वक्त लोग रुपया देकर अपना सहयोग दिखाता है। 'अग्निबीज' उपन्यास में इसका वर्णन हुआ है। श्यामा की शादी में पूरे गाँव के लोग मौजूद है। मेहमानों का स्वागत रस-दाना से किया जाता है। सत्कार स्वीकारने के बाद लोग अपने-यथाशक्ति के अनुसार रुपया देकर परंपरा का पालन करते है - "लोग पहले बखरी के हाते में लगे तम्बू में जलपान के लिए ले जाते थे। वहाँ प्रथा के अनुसार वे यथाशक्ति एक-दो रुपये थाल में रख कर, बिरंजी लाल की कापी में अपना नाम लिखाते।"[3] बिना निमंत्रण से शादी में आये हुए लोग भी रिवाज़ का पालन करते हैं - "असगाँव-पसगाँव के अलावा दूर-दूर से लोग बिना किसी निमंत्रण के काका की इकलौती बिटिया की

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 154-155
2. डॉ. रमेश तिवारी - हिन्दी उपन्यास साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन - पृ. 391
3. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 174

शादी में अपना न्यौता देने चले आ रहे थे। एक-एक रुपये की नोटों से मुंशी की कई थालियाँ भर चुकी थीं।"[1]

मार्कण्डेय की 'माई' नामक कहानी में बच्चे के जन्म के मौके पर होते रस्म रिवाज़ का वर्णन हुआ है। गाँव में बच्चे के जन्म के समय घर में खुशियाँ मनाई जाती हैं। इस मौके पर लोग घर में तोफा लेकर आते हैं। 'माई' कहानी में रज्जु के जन्म पर घर में खुशी मनाई जाती है। घर के पुराने दुशमन भी लोकाचार करने के लिए नहीं भूलते हैं - "माई यह भी बताती थीं कि परिवार के पुश्तैनी दुश्मन अपनी भेंट साथ-साथ ले कर रज्जु के बाबा को बधाई देने आये थे। सूरजभान सिंह का वर्णन करते हुए माई की आँखों में तारे चमकने लगते थे। सफेद कलारास घोड़े पर मुरेठा बाँध कर बरही के दिन आये तो बाबा ने खटिया से उठकर उनका स्वागत किया था। साथ में दस सेर जूनी दूध देनेवाली पहिलाँ गाय, दो नौकरों के सिर पर बतासे का रँगा हुआ कुंडा और एक्यावन रुपये बच्चे की मूँह देखाई।"[2] मार्कण्डेय ने अपने कथा साहित्य में ग्रामांचलिक रहन-सहन, खान-पान और रीति-रिवाज़ को अत्यन्त सहजता के साथ अभिव्यक्त किया है।

### 4.1.4 विवाह का सांस्कृतिक पक्ष

ग्रामांचलों में विवाह के रस्म-रिवाजों का खास महत्व होता है। गाँव में शादी के दौरान मातृपूजा, कन्यादान, सगाई, बिदाई आदि रस्म अपने विधि-विधान

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 177
2. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 155

के साथ किये जाते हैं। मार्कण्डेय के कथा साहित्य में विवाह की रस्मों का वर्णन बारीकी से हुआ है।

'अग्निबीज' में मार्कण्डेय ने ग्रामांचलिक विवाह की रस्म-रिवाजों की सुन्दर अभिव्यक्ति दी है। गाँव में श्यामा की शादी की तैयारी चल रही है। लोग उसके विधी-विधानों में लगे हुए हैं - "आज सवेरे से ही शादी के पहले होनेवाले लोकाचार शुरू हो गये होंगे। हिराऊ की डुगडुगी की आवाज और सोन्हू का सिंहा रह रहकर सवेरे से ही बज रहे थे। ...नाईन हल्दी का न्योता बाँटती उसके घर भी आयी थी। बडे सवेरे औरतों का झुंड मिट्टी लेने गाता बजाता बजमा पर गया था।"[1] रामपूर अंचल में शादी की तैयारी के लिए वहाँ के बजमा नदी की मिट्टी लाजिमी होती है। गाँव में शादी की तैयारी शुरू होते ही लड़की को घर के अंदर हो रहने का विधि है। तब से उसका रिश्ता बाहरी समाज से टूट जाता है। बुजुर्ग उसे हल्दी के उबटन लगाकर घर के अंदर रहने की आदेश देते है - "शादी के कर्मकाण्ड के कारण श्यामा आज उनके बीच नहीं थी। वैसे भी लगन के बाद लड़कियों को बाहरी समाज से एक हद तक काट दिया जाता है। हल्दी के उबटन की मालिश और ब्याह के गीतों का कार्यक्रम लगन के दिन से ही शुरु हो जाता है।"[2]

गाँव में शादी के संदर्भ में लड़की को नहाने तक के लिए रस्म का पालन करना पड़ता है। अग्निबीज में इस बात का जिक्र हुआ है - "कपडे बदले भी नहीं

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 157
2. वही - पृ. 150

जाते, न लगनही लड़की को नहाने दिया जाता है। नहछू-नहान तो कल होगा, जब लड़के वाले वर का मोटा लेकर आएँगे और उसमें लड़के के नहान का लिया हुआ थोड़ा पानी होगा। शारीरिक ओर मानसिक सामंजस्य के लिए उन्मुख दो प्राणियों के विपरीत भाव को समाप्त करने का यह पहला चरण है।"[1] पतरी उतारने के रस्म के बाद श्यामा नहाये बिना औरतों के नाच-गान को देख रही थी।

गाँव में शादी के दिन सुबह दुलहिन के घर मातृ पूजा की विधि होती है। श्यामा के घर उसके लिए तैयारी चल रही है - "बड़े सवेरे मातृपृजन की साइत थी। मूरत महाराज सूरज निकलने से पहले ही कुश और आम का पल्लव लिये दरवाजे पर आ बैठे। नाइन ने आँगन लीप कर चौके पर दिया। कहाइन अपने पूरे परिवार के साथ पानी भरने आ गयी। गोपी माँडो के एक कोने पीढ़ा चढ़ कर बैठ गयी। ...गीत गानेवाली ब्राह्मणियाँ कब की आ कर आँगन में बैठ गयी थीं।"[2] पूजा शुरु होते ही मूरत महाराज श्यामा की माँ को मंडप में बुलाते हैं - "पूजा शुरू हो गयी। सारे देवी-देवता इस पुण्य-यज्ञ को देखने के लिए बुलाये जाने लगे और मूरत महाराज के लोकाचार के समानान्तर गीत उठाने लगीं। धीरे-धीरे सारा आँगन औरतों से खचाखच भर गया।"[3] पूजा के बाद काकी पंडित का दक्षिणा देकर वहाँ से उठ जाती है।

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 160
2. वही - पृ. 166
3. वही - पृ. 168

मातृपूजा के बाद कन्यादान की विधी है - "कन्यादान के लिए साधो काका की बुलाहट हुई। ज्वाला बाबु और चन्दा बहू भी मंडप में आने वाले थे,... मुरत महाराज बड़े जोश में मन्त्रोच्चार करके... कन्या को मंडप में ले आने का संकेत किया और नाइन श्यामा को धोती और पिछौरी में लपेट कर ले आयी। चन्दा बहू ने उठ कर श्यामा को बैठाया।"[1] आगे दुलहिन के भाई की तरक से रस्म चलती है - "आचमन-मार्जन के बाद वर-पक्ष के पंडित ने लड़की के भाई को बुलाने के लिए कहा।"[2] सुनीत मंडप में आते ही - "वर पक्ष ने सिल्क की चादर सुनीत के कंधों पर रखा। उसमें धान का लावा रख कर सुनीत पंडितों की आज्ञा से श्यामा के ऊपर फेंकने लगा। ...मूरत महाराज ने खुद उठ कर सुनीत के हाथ में पानी का गेडुआ थमा कर समझाया, 'जल की धार धीरे-धीरे टूटनी चाहिए। धार के टूटते ही भाई अपनी बहिन खो देता है, वह परायी हो जाती है। इस जल-पात्र को संभालते हुए तुम्हारा हाथ काँपना नहीं चाहिए। जल की धार भी नहीं टूटनी चाहिए। ध्यान रखो कि तुम बहिन का दान कर रहे हो। इसलिए तुम्हारा हृदय विचलित न होने पाये। यह कर्म की बेला है, पुण्य की घड़ी है।"[3] मार्कण्डेय को 'अग्निबीज' उपन्यास में शादी के सांस्कृतिक पक्षों को उद्‌घाटित करने में खास उपलब्धि मिली है।

मार्कण्डेय ने 'सोहगइला' नामक कहानी के ज़रिए गाँव में बिदाई के वक्त दुलहिन के हाथ सोहगइला पकड़वाने के रस्म का चित्रण किया है। विदाई के वक्त

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 181-182
2. वही - पृ. 182
3. वही - पृ. 182

दुलहिन के हाथ में उसकी माँ सिंदूर का बक्सा रख देती है। ससुराल पहूँचने तक उसे सिंदूर का बक्सा अपने हाथ में रखना होगा। आठ वर्षीय रनिया की बिदाई के वक्त माँ उसकी हाथ में सोहगइला रखकर उसे संभालकर रखने का आदेश देती हैं - "उसके दोनों निरीह खुले हुए, नन्हें-नन्हें हाथों को पकड़ कर उनमें सोहाइला दबाते-दबाते, माँ की बरसाती नदी सी आँखें किनारों को लाँघकर बह चली थीं, 'इन्हें छोड़ना नहीं'।"[1] मार्कण्डेय ने इस कहानी में सांस्कृतिक रूढ़ी एवं रिवाज़ पर व्यंग्य भी किया है। रनिया ने माँ की दी हुई हिदायत की याद में सोहगाइला को छाती से लगाकर खटोली पर बैठी रही। रास्ते में लड़के के पिता द्वारा दिया गया पानी भी उसने नहीं पिया, क्योंकि वह एक साथ सोहाइला और पानी का लोटा नहीं संभाल पाती थी। दरअसल उसका गला सूखता जा रहा था। आगे वह सामने पड़ा लोटा उठाकर पानी पी जाती है। पानी पी लेने के बाद उसे पता चलता है कि सोहगइला उसके हाथ में नहीं है - "पानी से भरे, उसी पीतल के बडे लोटे को दोनों हाथों से उठाकर मूँह में लगाये, वह यह भूल ही गयी थी कि सोहगइल कब से उसके हाथ में नहीं है और व्यंग्य की तीखी हंसी उसके चेहरें पर बिखर गयी थी।"[2] मधुरेश के मुताबिक - "आठ वर्ष की रनिया वास्तविकता को पहचानने लगती है। उसका बाप भी अपने माँ-बाप का अकेला बेटा था, जब उसकी माँ उससे व्याहकर आयी थी। लेकिन बडी बखरी की आरामतलब और दृश्यहीन औरतों की सेवा में उसके रुखे हाथों की काली रेखाओं का जाल और काला होता रहा है। यह सब

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 194
2. वही - पृ. 198

सोचकर हाथ में बंधे सोहगइला की चिंता उसके लिए खत्म हो जाती है और भरा हुआ पानी का लोटा तात्कालिक भौतिक ज़रूरतों की पूर्ति का प्रतीक बन जाता है, जिसके आगे रूढियों और संस्कारों की दिवारें ढहती दिखाई देती हैं।"[1]

### 4.1.5 मनोरंजनात्मक पहलू

व्यक्ति के जीवन में मनोरंजन का अहम स्थान होता है। इसके जरिए वह जीवन की ऊब और थकान से दूर रहता है। मनोरंजन से व्यक्ति मन को खुशी मिलती है। दरअसल स्वास्थ्य के लिए मनोरंजन ज़रूरी होता है। ग्रामांचलों में लोग खाली वक्त गपशप, कुश्ती, कबड्डी आदि के जरिए अपना मन बहलाव करते हैं।

### 4.1.5.1 गपशप

ग्रामांचलों में लोग खाली वक्त मिलने पर गाँव के चौपाल पर इकट्ठे हो जाते हैं। इस मंडली में तरह-तरह की बात होती हैं। मर्द ऐसे बैठकों में हुक्का और बीड़ी तंबाकू के मज़ा लेकर गम्भीर बात तथा तमाशाओं में लगे रहते हैं। 'बातचीत' कहानी के शुरुआत में गाँव के चौपाल पर होनेवाले गपशप का चित्रण मार्कण्डेय ने यों किया है - "जैसे अखबारों में पहले पन्ने पर एक खास खबर दी जाती है, और उसके लिए पत्रकार, न जाने कितनी खबरों की जाँच पडताल करते हैं, वैसे ही गाँवों में कुछ मौलिक पत्र निकलते हैं, जिनके पत्रकारों का काम रोज न रोज़ एक

---

1. वागर्थ मई 2005 - पृ. 73

नया मसाला खोज निकालना और फिर उसमें नमक मिर्च लगा कर, हुक्के के धुएँ के साथ उडाना ही होता है। प्रायः इस काम को मनोयोग पूर्वक करनेवालों के मुँह में दाँतों की कमी होती है, जिससे वे बातों को मसूडे से चबा-चबा कर सरस बनाते हैं और फिर बुजुर्गी का सुबूतनामा लगा कर, इस चौपाल से उस चौपाल तक फैलाया करते हैं।"[1]

'घूरा' कहानी में भी ऐसे ही गपशप करनेवाले एक झुंड का बारीकी से वर्णन मिलता है - "ब्यास की मडइया और पाही वाले ठाकुर की दालान में दिन-दिन भर गँवई ठाकुरों और परजों की मँडली जमी रहती, और खेती-बारी के भविष्य, नये कायदे-कानून, गाँव के आपसी झगड़े-झंटे तथा बटोर-पंचायत की बातें चलती रहतीं। ...बतकही और चिलम की गर्मी में किसानों का जमघट लगा रहता।"[2] 'बीच के लोग' कहानी का आधा भाग गपशप से ही गुजरता है - "दरवाजे के पूरब नीम की छाया में अलाव के अगल-बगल कई लोग बैठे बातें कर रहे थे। चिलम चल रही थी। ....तभी दूर से फउदी दादा के खाँसने की आवाज़ सुनायी पड़ी। ...चिलम हुक्के पर बैठाते हुए फउदी दादा बोले...."[3] दरअसल ग्रामीण ऐसे गपशप के जरिए मन को हलका कर देते हैं तथा ऊब से मन को छुटकारा देते हैं।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 205
2. वही - पृ. 33
3. वही - पृ. 479

### 4.1.5.1 कबड्डी और कुश्ती

कबड्डी गाँव के बच्चों का पसंदीदा खेल है। मार्कण्डेय की 'मन के मोड' कहानी में इसका उल्लेख मिलता है। जीतु अपने दोस्तों के साथ कबड्डी खेलने में उत्सुक रहता है। इस खेल में उसे समय का भी खयाल नहीं रहता है। एक दिन उसका भाई रामशरण रात को देर से घर लौटता है तो जीतू घर में नहीं मिलता है। वह अपनी पत्नी से पूछता है - "जीतू अभी कबड्डी खेलकर नहीं लौटा क्या?"[1] जीतू को कुश्ती खेलना भी पसंद है - "...जीतू लँगोट बाँध कर अखाडे में उतर गया। उधर से ठाकुर साहब का लड़का भी चमकती छीट की कसी चड्ढी चढाये मैदान में आ गया। ...आँख मारते दोनों किशोर पहलवान अखाडे में जुट पड़े। ...ठाकुर के लड़के ने उसकी गरदन पकड़ कर खींची तो जीतू के घुटने जमीन पर हिक गये; पर वहीं से जीतू ने उसके हाथ पकड़कर, घूमकर वह दाँव मारा कि ठाकुर का लड़का चारों खाने चित। चारों ओर खुशी की आवाज़ गूँज गयी।"[2] कुश्ती लड़ने और कुश्ती देखने में भी मज़ा मिलता है। लोग इसका खूब आस्वादन करते हैं। अतः गाँव में कुश्ती की प्रतियोगिता भी रखी जाती है। 'अग्निबीज' उपन्यास का बाकर अपने जवानी के दिनों में भाग लिये कुश्ती की याद करता है - "उसे जवानी के दिनों की वह घटना अक्सर याद आती है, जब पचइयाँ के दंगल में बिनेसरी पांडे से उसकी कुश्ती हुई थी और हाथ मिलाते ही उसने धोबीपाट मारकर पांडे को चारों खाने चित कर दिया था।"[3]

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 136
2. वही - पृ. 144
3. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 125

### 4.1.6 पर्व एवं त्योहार

प्रत्येक पर्व एवं त्योहार उस समाज की सांस्कृतिक पहचान होती है। गाँव में पर्व-त्योहारों को बडी श्रद्धा के साथ मनाते हैं। प्रत्येक पर्व-त्योहार को मनाने के लिए अपने तौर-तरीके होते हैं, जिन्हें लोग परंपरा से करते आ रहे है। "सांस्कृतिक पर्वों का मानव जीवन की लौकिक एवं अलौकिक दोनों प्रकार की खुशियों से सम्बन्ध है। एक तरफ जहाँ जीवन के लिए आह्लाद लेकर आते हैं वहीं साथ कुछ शास्त्र-सम्मत रूढ़ परम्पराओं एवं मान्यताओं का ध्यान कराकर मनुष्य के जीवन में सद्-असद् का ज्योति-बिन्दु छोड़ जाते हैं।"[1]

मार्कण्डेय की 'हंसा जाई अकेला' कहानी में दशहरे के दिनों में चलनेवाली रामलीला की अभिव्यक्ति मिलती है। दशहरा अश्विन मास की शुक्ल पक्ष में मनाया जाता है। इस मौके पर रामलीला खेला जाता है, जिसमें राम रावण को मारकर सत्य की विजय प्राप्ति करते है। दशहरे के दिन आयोजित किये गये रामलीला में हंसा रावण बनता है - "उन्हीं दिनों गाँव में रामलीला होने को थी। ..हंसा सोचने लगा... जल्दी-जल्दी काला चेंगा रावण के गले में डाल दिया गया। सिर पर पगड़ी बाँध कर दस मुँह वाला चेहरा हंसा दादा ने पहन लिया। हाथ में तलवार ली।"[2]

'अग्निबीज' में रक्षाबंधन का वर्णन मार्कण्डेय ने बेहद खूबसूरती के साथ किया है। रक्षाबंधन भाई-बहन के पवित्र बंधन का त्यौहार है। रक्षाबंधन के दिन

---

1. डॉ. ज्ञानचन्द गुप्त - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और ग्रामचेतना - पृ. 214
2. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 218

बहन भाई के सुखद जीवन के लिए व्रत रखती है। रक्षाबंधन बाँधते वक्त भाई बहन को तोफा देता है। नागपंचमी के दिन होनेवाली रक्षाबंधन के रस्म को मार्कण्डेय ने यों उकेरा है कि - "बनारस से पूरब और उत्तर में पटना के पास तक किसान-कन्याओं का रक्षाबन्धन जरई से ही होता। नागपंचमी के दिन वे गाती-बजाती तालाब के किनारे जाती हैं और वहाँ से मिट्टी लाकर पहले उसकी पिंडी बनाती हैं। फिर उसमें जौ के दान गाड़ती हैं। उसे रोज़ संभालती हैं और तरह-तरह के गीत गाकर उसके बढने की कामना करती हैं। कजली के दिन वे फिर गाती-बजाती उसी तालाब के किनारे जाकर मिट्टी को पानी में बहा देती हैं और पूरे पखवारे के मन-प्राण के सिंचित, न जाने कितने गीतों और कथाओं से विभूषित जौ के हरे-हरे कोमल पत्तों का बन्धन लेकर घर लौटती हैं। वे इसे भाई को बाँधती हैं - कितना कोमल और भावभीना है यह बन्धन।"[1] श्यामा अपने भाई के हाथ जरई बाँधकर रस्म पूरा करता है। सुनीत उसके हाथ एक रुपया का भेंट देता है - "सुनीत जरई बाँधते ही उसके हाथ पर रुपये का एक सिक्का रख कर शरमाने लगता था।"[2]

### 4.1.7 लोकगीत

लोकगीत ग्रामांचलिक सांस्कृतिक जीवन का अभिन्न अंग होते हैं। यह ग्रामीण जीवन का स्पंदन है क्योंकि इसमें लोक मन की भावनाओं की अभिव्यक्ति होती है। यहाँ डॉ. ज्ञानचन्द गुप्त का कथन समीचीन लगता है - "लोकगीत ग्रामीण

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 37
2. वही - पृ. 38

जनता की भावना, उनके संवेगों, अनुभूतियों एवं उनकी सौन्दर्य भावना का प्रतिनिधित्व करते हैं।"[1] इसमें भावना, सरलता और संगीतात्मकता का समन्वय रहता है। "लोकगीत मौखिक परम्परा से संचित होते हैं। इनका रूप थोड़ा-बहुत परिवर्तित होता रहता है। ये प्रकृति एवं लोक समाज के उद्‌गार हैं। इनकी भाषा लोक बोली होती है। लोकगीतों में संबाद शैली की प्रधानता होती है। लोकगीत लोकजीवन के सभी क्षेत्रों से जुडे होते हैं। इनका क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। लोकगीतों से लोक मानस का उल्लास भी मुखरित होता है और दर्द भी फूटता है। लोकगीत लोक-संस्कृति के सही संवाहक हैं।"[2]

मार्कण्डेय के कथासाहित्य में जगह-जगह पर लोक मन की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिए लोकगीतों का प्रयोग हुआ है। खासकर शादी के मौके पर उनकी खुशी और गम को अनुभूत कराने के लिए लोकगीतों की अभिव्यक्ति हुई है। 'अग्निबीज' में श्यामा की शादी की रस्म चल रही है। लोग घर में चले आ रहे थे। बीच-बीच में आँगन में गाये जानेवाले गीतों की पंक्ति टूट कर सुनाई पड़ जाती थीं।

"मोर पिछवरवाँ लवँगिया क पेड़वा
लवँग चुअइ आधी रात,
लवँग कटाइ बाबा पलंग बिनायनि
रेश्म डोर लगाइ"[3]

---

1. डॉ. ज्ञानचंद गुप्त - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और ग्रामचेतना - पृ. 225
2. डॉ. राजेन्द्र कुमार - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में ग्रामजीव और संस्कृति - पृ. 66
3. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 163

शादी के दिन सुबह मातृपूजन की रस्म होती है। एक और रस्म हो रही थी। आँगन के एक ओर से "दुलरा आजी की शान्त, गम्भीर आवाज़ ने गीत उठाया,

आटल छोडलूँ, मैं पाटन छोड़लूँ,
छोड़लूँ मयरिया की गोद
एहि सेंधुरा के कारण बाबा
छोडलूँ मैं देस तिहार।"[1]

शादी के बाद अपने घर में लड़की परायी बन जाती है। नारी की इस दुख-दर्द को प्रस्तुत लोकगीत में संजोया गया है।

कन्यादान की रस्म के साथ स्त्रियाँ करुण स्वर में गीत गाती जा रही थीं-

"गेडुआ उठावत भइया हथवा न काँपें,
टूटै न पनियाँ की धार,
दान करत बीरन छतिया न काँपै
जून धरम की लग्गि।"[2]

'अग्निबीज' उपन्यास का शुरुवात में मार्कण्डेय ने गाँव की औरतें द्वारा नदी की पूजा का चित्रण किया है। बरसात के समय में बजमा का पानी मंदिर की सीढ़ी छूते ही औरतें गाती-बजाती उसकी पूजा करती है।

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 169
2. वही - पृ. 183

"बजमा हथवा कगनवा मैं लायी हो ना।
बजमा मंगिया सेंधुरवा मैं लाई हो ना।।
बजमा मथवा टिकुलिया मैं लाई हो ना।"[1]

परिवेश को स्वाभाविकता के साथ उभारने में ये लोकगीत सहायक सिद्ध हुए।

मार्कण्डेय के कथासाहित्य में स्वातंत्र्योत्तर सांस्कृतिक परिवेश का अच्छा खासा चित्रण उपलब्ध होता है। ग्रामाँचलिक आचार-विचार तथा रस्म रिवाजों के सकारात्मक सांस्कृतिक पक्षों को बखूबी से उकेरा गया है, साथ ही संस्कृति के नकारात्मक मान्यताओं पर व्यंग्यात्मक प्रहार भी किया हैं।

## 4.2 ग्रामांचलिक जीवन और धर्म

ग्रामीण परिवेश में धर्म और संस्कृति के बीच कोई स्पष्ट विभाजक रेखा नहीं खींची जा सकती है। दरअसल ग्रामीण संस्कृति धार्मिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक होती है। सामाजिक जीवन को स्वस्थ और संयम रखने के लिए इन दोनों तत्वों का होना लाजिमी है। ग्रामांचलों में धर्म का खास महत्व होता है। ग्रामीण जनता धर्म के प्रति अत्यंत भावुक एवं श्रद्धालु होती है।

धर्म ईश्वरीय श्रद्धा, पूजा-पाठ तथा सामाजिक नैतिक कर्तव्यों से लैस है। धर्म एक पद्धति या अनुशासन होता है - "धर्म वह अनुशासन है, जो अन्तरात्मा को

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 17

स्पर्श करता है और हमें बुराई से संघर्ष करने में सहायता देता है; काम, क्रोध और लोभ से हमारी रक्षा करता है; नैतिक बल को उन्मुक्त करता है; संसार को बचाने के, महान कार्य के लिये साहस प्रदान करता है।"[1] दरअसल सामाजिक विकास में धर्म का खास महत्व रहता है।

ग्राम जीवन में कोई भी ऐसा हिस्सा नहीं होगा जो धर्म से प्रभावित न हो। अज्ञान और अशिक्षा के तहत गाँव में धर्म का मूल्य घटता जा रहा है। वे धर्म के नाम पर अंधविश्वास में जकड़ गये हैं। नतीजतन जो धर्म समाज को विकास के पथ पर ले जानेवाले है वही समाज को पतन की ओर ले जाते हैं।

स्वातंत्र्योत्तर संविधान के तहत धर्मनिरपेक्षता की घोषणा, विज्ञान की प्रगति, शिक्षा, यांत्रिक सभ्यता तथा आधुनिकीकरण ने धार्मिक मूल्यों पर प्रभाव डाला है। नई पीढ़ी धार्मिक मूल्यों की जगह पर भौतिक मूल्यों की ओर अग्रसर हो गयी। डॉ. ज्ञानचन्द गुप्त के मुताबिक ग्राम जीवन की धार्मिक विचारों में खास बदलाव स्वतंत्रता के बाद ही हुई है - "ग्राम-चेतना की धार्मिक विचारसरणियों में परिवर्तन मुख्यतः स्वतन्त्रता के पश्चात् आया है। देश में धर्म-निरपेक्ष गणतंत्र की स्थापना ने ग्रामीण धरातल पर उसकी मानसिकता को नये वैचारिक आयाम दिये। गाँववालों ने प्रथम बार धर्म-निरपेक्षता एवं पारस्परिक समानता की भावना को अनुभूत किया जिसके कारण ग्रामीण महन्तों की धार्मिक गद्दियाँ हिल उठीं।"[2]

---

1. डॉ. राधाकृष्णन - धर्म और समाज - पृ, 45
2. डॉ. ज्ञानचन्द गुप्त - स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और ग्रामचेतना - पृ. 190

धार्मिक विचारों में बदलाव ज़रूर हुआ है फिर भी ग्रामीणों के मन में ईश्वर के अस्तित्व पहले की तरह बने रहे हैं। गाँव में धर्म बाह्याडम्बर और पाखण्ड से मुक्त नहीं हुआ है। मार्कण्डेय ने ग्रामजीवन में व्याप्त धार्मिक विश्वासों को गहराई से छान-बीन किया है जिसके तहत उन्होंने धार्मिक अंधविश्वासों का कटु आलोचना की है। यहाँ लक्ष्मणदत्त गौतम की कथन समीचीन लगता है - "उसने जनजीवन में रचे-बसे अंधविश्वासों को देखा है और उन्हें ध्वस्त होते देखने का स्वप्न भी है। यही नहीं, पूर्ण संकल्प के साथ उसने उन रूढियों पर प्रहार करने का कोई अवसर नहीं जाने दिया।"[1]

## 4.3 ग्रामाँचलिक जीवन के धार्मिक आयाम

ग्रामीणों के मन में ईश्वर के प्रति अटूट आस्था है। वे अपनी जिन्दगी का दुख-दर्द तथा बाधाओं को पार करने के लिए ईश्वर की पूजा करते हैं। अशिक्षा और अज्ञान के कारण गाँव में अंधविश्वासों की जडें अत्यंत गहरी हैं। दरअसल गाँव में धर्म केवल आडम्बर और पाखण्ड बनकर रह गया है। आगे मार्कण्डेय के कथा-साहित्य के जरिए ग्रामांचलिक जीवन के धार्मिक आयामों का अध्ययन करेंगे।

### 4.3.1 ग्रामदेवता की पूजा

गाँव के लोग ईश्वर की पूजा करते हुए उसके प्रति अपना श्रद्धा भाव को व्यक्त करते हैं। जिन्दगी की बुराई के वक्त वे देवी-देवताओं की शरण में पहुँचते है

---

1. डॉ. लक्ष्मणदत्त गौतम - आधुनिक हिन्दी कहानी साहित्य में प्रगति चेतना - पृ. 420

तथा उससे मुक्ति के लिए मिन्नतें करते हैं। खुशी के मौके पर पूजा-पाठ के जरिए देवताओं को प्रसन्न करना भी वे नहीं भूलते हैं। प्रत्येक गाँव में एक स्थानीय देवता होता है। उसके प्रति ग्रामीणों की आस्था अटूट होती हैं।

मार्कण्डेय के 'अग्निबीज' में 'बजमा माई' की पूजापाठ का जिक्र मिलता है। बजमा माई रामपूर अंचल की स्थानीय देवी हैं। ग्रामीण बजमा माई का अस्तित्व बजमा नदी में मानते हैं। दरअसल उस नदी बजमा माई के नाम से ही जाना जाता है। बरसात के दिन बजमा नदी का पानी ऊपर चढकर पासवाली मंदिर की सीढ़ी छूते ही औरतें बजमा माई की पूजा करने को जाते हैं - "बजमा आँचल पसार रही है, पानी मन्दिर की सीढ़ी छूते ही औरतें कहती; - बजमा सिंधूर टिकुली माँगती है। चलो, बहिनी सुहागिन का माथा भर आएँ। घर-घर से कतार बनाकर, गाती बजाती वे निकलतीं।"[1]

'दौने की पत्तियाँ' नामक कहानी में लोग चेचेक की व्याधि से ग्रस्त होते वक्त गाँव की 'महारानी देवी' की शरण में जाता है। गाँव का विश्वास है कि महारानी देवीवाली नीम की टहनियों से चेचक की व्याधि से ग्रस्त व्यक्ति को सहलाने से वह रोगमुक्त हो जाता है। पियरी कुमार की प्रेमिका है। गाँव में फैली चेचक की महामारी का शिकार पियरी भी हो जाती है। कुमार पियरी की हालत से चिंतित है। वह अपनी माँ से दुख बाँटते हुए कहता है कि अब पियरी का जीवन महारानी देवीवाली नीम से ही बच सकता है। - "हाँ माँ पियरी की हालत बहुत

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 17

खराब है दो दिन हुए, उसे होश नहीं हो रही है। चेचक के दाने, सारे शरीर में फैल कर मिल गये हैं। लोग कहते हैं, अब तो महारानीवाली नीम की टहनियों की ही आशा है...."[1] गाँव में शादी के बाद लड़की दुल्हे के साथ महारानी देवी की मंदिरवाली नीम की पूजा करता है - "महारानीवाली नीम की पूजा के लिए इस गाँव की चलन है कि लड़कियाँ शादी के बाद दुल्हे के साथ महारानीवाली नीम की पूजा करने आती है।"[2]

### 4.3.2 मनौतियाँ

ग्रामीणों के विश्वास में सब कुछ करने के लिए ईश्वर की कृपा ज़रूरी होती है। वे अपनी आशाओं की पूर्ति के लिए देवी-देवताओं से आशिश की माँग करते हैं, इसके लिए वे मनौती करते हैं। मनौती ईश्वर के प्रति वचन होता है जिसमें मनोकामना की पूर्ती हेतु पूजा-पाठ, व्रत या कुछ पदार्थ देवताओं के लिए समर्पण करते हैं। यानी "इष्ट कामना की पूर्ति हेतु देवी या देवता को दिया हुआ पूजा का अभिवजन या एकाध पदार्थ अर्पण प्रतिज्ञा को मनौती कहा जाता है।"[3] ग्रामीण संस्कृति में मनौती करने का रिवाज़ काफी प्रबल दिखाई देता है।

'भूदान' कहानी का रामचतन अच्छी जिंदगी के लिए बनसती माई से प्रार्थना करते हैं - "बनसती के लहूरे चोरा पर रामचतन के पाँव अनजाने ठमक गये, 'जै बनसती माई, तुम्हें कडाही चढ़ाएँगे माई, गरीब पर दया करे महारानी!

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 18
2. वही - पृ. 18
3. संपा. पं. महादेवशास्त्री जोशी - भारतीय संस्कृति कोश, खंड 4 - पृ. 111

जसवंती तुम्हें पियरी चढ़ाना न भूलेगी माई, इस साल भूल चूक-छिमा करो माई।"[1] 'बादलों का टुकडा' नामक कहानी का जसमा का परिवार गरीबी से बेहाल है। उसकी बेटी कुनाई रोगग्रस्त है। इस संकट से मुक्ति के लिए जसमा डिह बाबा की मनौती करना चाहती है, हालाँकि घर की गरीबी से वह नहीं कर पाती है - "दो पैसे की धार-तपादन भी नहीं कि डिह बाबा को चढ़ा कर मनौती करूँ। जाने क्यों नाराज़ हैं देवता-दानी।"[2]

'मन के मोड' कहानी में द्रौपदी कुश्ती में जीतु की सफलता के लिए मनौती करती हैं - "जीतू को जिताना जो था ज़मींदार के लड़के से। ...ऊपर से हनुमानजी को सवा सेर लड्डू और काली माई को लहँगा चुनरी की मनौती। पचैंया के दिन बडे स्नेह से आशीर्वाद देकर जीतू को द्रौपदी ने विदा किया। और घर के चौकठे पर हनुमानजी और काली माई का स्मरण करते हुए बैठी रही।"[3]

बीमारी तथा संकटों से मुक्ति, धन की प्राप्ति तथा जिंदगी की कामयाबी के लिए ग्रामीण देवी-देवताओं से मनौती करते हैं।

### 4.3.3 तीर्थयात्रा

मोक्ष प्राप्ति तथा परलोक जीवन की चिंता गाँववालों को हमेशा चिंतित किये रहती है। वे अपने पापों से मुक्त होकर स्वर्ग प्राप्ति की आशा रखते हैं। पाप

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 271
2. वही - पृ. 476
3. वही - पृ. 143

से मुक्ति तथा पुण्य की प्राप्ति के लिए वे तीर्थ यात्राओं पर जाते हैं। उनको विश्वास है कि तीर्थ यात्रा करके वहाँ के पुण्य नदियों में स्नान करने से पाप से मुक्ति मिल जाती है।

मार्कण्डेय की 'महुए के पेड' नामक कहानी में ग्रामीण औरत की तीर्थयात्रा करने की चाह को बखूबी से उकेरा गया है। कहानी का दुखना के मन में तीर्थयात्रा पर जाने की ललक बहुत गहरी है, लेकिन वह नहीं जा सकती है। दुखना के मन में तीर्थयात्रा करनेवालों के प्रति बडी सम्मान रहती है - "कई साल से दुखना के मन में तीर्थ यात्रा की बडी लालसा है। अगल-बगल की पडोसियों कई बार गंगा-स्नान कर आयीं। मलमास नहा डाला, गरहन में पैदल चलकर काशी का पुण्य लूट आयीं, पर दुखना कहीं न जा सकी। लेकिन पिछले महीने, जब से हरखू की माँ प्रयागराज से खोपड़ी के बाल साफ करा और गले में तुलसी की मनियाँ पहन कर लौटी है, तब से दुखना के पास उसकी आवभगत बढ़ गयी।"[1] दुखना हरखू की माँ को तीर्थ करने के कारण बडी भागशाली मानती है। उसकी तीर्थयात्रा की बातों को बडी खुशी के साथ सुनती है। हरखू की माँ दुखना से तीर्थयात्रा की बात कहती है - "मइया! तिरबेनी का दरसन करके ही जैसे पाप भाग जाता है। वहाँ किसिम-किसिम के लोग दूर-दूर से पैदल चल कर आते हैं। सच मानो मइया! कितनों के तो पाँव तक कट जाते हैं। लेकिन ईश्वर की महिमा है कि संगम में गोता लगाते ही अतमा पवितर हो जाती है। नहीं तो मेरे पाँव में इतना जोर कहाँ?"[2] ग्रामीणों के

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 132
2. वही - पृ. 132

विश्वास के अनुसार तीर्थ करने के लिए ईश्वर की कृपा चाहिए तथा तीर्थ यात्रा नहीं करने से जिंदगी व्यर्थ बन जाती है। इस तथ्य को कहानी का हरखु की माँ का कथन ज़रूर जाहिर करता है - "यह तो ईश्वर की ही माया समझो, जो बुढ़ाई समों में दरसन हो गये। ...दो दिन की जिंदगी में तीरथ-बरत न कर लोगी तो आगे क्या होगा?"[1]

'बिंदी' कहानी में भी तीर्थयात्रा का जिक्र मिलता है। बिंदी की बूढी दादी तीर्थयात्रा पर जाना चाहती है। आखिर दादी अपनी भतीजी का बेटा गजराज के सहारे तीर्थयात्रा पर जाता है - "गजरात कम्बल में दादी को लटेप कर बनारस पहूचा था। कितनी भीड़ थी, कैसा आलम। तिल धरने को कहीं जगह नहीं थी।"[2] गाँववालों के मन में स्वास्थ्य बिगडने के बाद भी तीर्थयात्रा पर जाने की आशा रहती हैं। वे जीवन की सारी मुश्किलों को पार कर तीर्थयात्रा कर पुण्य-प्राप्त करना चाहते हैं।

## 4.4 धार्मिक जीवन का नकारात्मक पक्ष

धर्म ग्रामीण जीवन के प्रत्येक पक्ष को प्रभावित करता है। गाँववालों के अज्ञान और अशिक्षा के कारण धर्म दिनों-दिन नकारात्मक बनता जा रहा है। छुआछूत, जादू-टोना, शकुन-अपशकुन, शुभ-अशुभ तथा भूत-प्रेत की स्वीकृति के कारण ग्रामीण जीवन जर्जर बनता जा रहा है।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 132
2. वही - पृ. 282

### 4.4.1 अस्पृश्यता

हिन्दु धर्म में जाति-भेद की प्रथा परंपरा से चलता आ रही है। दरअसल ग्रामीण समाज में जाति-भेद से उत्पन्न समस्या काफी जटिल बन गयी है। गाँव में जाति ही व्यक्ति के पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन पद्धति को निर्धारित करता है। जाति-व्यवस्था के उँच-नीच भेद-भाव ने अस्पृश्यता को जन्म दिया है। अस्पृश्यता समाज की वह व्यवस्था है जिसके तहत निम्न जाति के व्यक्ति उच्च जाति के व्यक्ति को छू नहीं सकते हैं। अगर छूता है तो उच्चजाति के व्यक्ति अपवित्र हो जाता है। जातिभेद से उत्पन्न अस्पृश्यता ने हिन्दु धर्म की शक्ति व सहिष्णुता को अशक्ति व अमानवीयता में तब्दील कर दिया है।

अस्पृश्यों पर विविध प्रकार के नियम लादे जाते हैं। उन्हें उन नियमों का पालन करके जीना पडता है। उन्हें पूजा-पाठ, धर्मग्रंथों का पठन, शिक्षा करने तथा आजीविका चुनने का अधिकार नहीं रहा है। उच्च जाति के बनाये नियम निम्न जाति के नियति बन गये है। इसका जिक्र मार्कण्डेय की 'हलयोग' नामक कहानी में मिलता है - "ब्राह्मण-ठाकुरों का हल चलाना, मरे हुए ढोर-डाँगर गाँव से उठाना, पूरे परिवार समेत मालिक के घर का काम करना ही उनकी नियति थी।"[1] कहानी का नायक चैथीराम चमार है। निम्नजाति में होने के कारण उसका अध्यापक बन जाना गाँव के उच्च जाति के लिए असहनीय बन जाता है - "कुल मतलब यह कि पत्थर की लीक हुई मानसिकता पर चौथीराम का अध्यापक होना मर्मान्तक आघात

---

1. मार्कण्डेय - हलयोग - पृ. 13

पहूँचाया था। अपनी नंगई और कठहुज्जती के लिए मशहूर रघुवर पण्डित का कहना था कि, 'लुटिया ही डूब गयी गाँव के ब्राह्मन-ठाकुरों की। कोप होगा महामारी फैलेगी, नाती-पनाती संकर बरन हो जायेंगे। इसी को कलिकाल कहते हैं। अब चमार वेद बाँचेंगे और बच्चों का विध्यारम्भ करेंगे।"[1] कहानी में लेखक ने स्वातंत्र्योत्तर धार्मिक परिवेश को उकेरते हुए कहा है कि - "उन दिनों ब्राह्मण अध्यापकों को पण्डितजी, ठाकुरों को बाबू साहब और इतर जातियों को मुन्शीजी कहे जाने का चलन था।... उस समय किसी चमार का अध्यापक बन जाना एक उनहोनी बात थी।"[2] इससे जाहिर होता है कि ऐसे मौके पर चौथीराम के लिए अध्यापक बन जाना कितना मुश्किल होता है। चौथीराम के लिए कक्षा का सब बच्चे एक समान है। वह महाराज के पुत्र को भी ज़मीन पर सब के साथ बिठाते है, इससे महाराज क्रुद्ध हो जाता है। उसे स्कूल से निकाला जाता है।

मार्कण्डेय की 'हंसा जाई अकेला' नामक कहानी भी अस्पृश्यता की समस्या को उकेरती है। कहानी का हंसा गाँधीवादी विचारों में आस्था रखनेवाला है। वह गाँव में उनके विचारों का प्रचार करता है। गाँव के कुछ बूढ़े हंसा की हसी उड़ाते हुए गाँधी पर व्यंग्य करते हैं। इस व्यंग्यात्मक कथन से उनकी जातिगत भेद-भाव या ऊँच-नीच की भावना जाहिर होता है - "कुछ बूढे नाक फुलाते हुए, सुरती की नास ले, अपने सुतलियों के ढेरे पर चक्कर दे कर कहते, 'मिल गया ससुर को एक काम। गन्ही बाबा का पायक काहे नहीं हो जाता। कौनों काँगरेसी जात-कुजात

---

1. मार्कण्डेय - हलयोग - पृ. 13
2. वही - पृ. 13

मेहरारू मिल जाती। गन्ही को कोई विचार थोडे हैं, चमार-सियार का छुआ-छिरका तो खाते हैं।"[1]

'अग्निबीज' में मार्कण्डेय ने अस्पृश्यता की समस्या को विस्तार से अभिव्यक्त किया है। गाँव में अस्पृश्यता की मानसिकता सहज बन गयी है। भुगतनेवाले भी उस पर सोचते नहीं है - "मुसई भी सदा उसी चौखट पर बैठता था, जहाँ आज सागर खड़ा था। यह सब इतना सामान्य और सहज था कि इस पर न तो कोई सोचता था और न कुछ कहता। इसलिए मुराद अपने घर की तरह यहाँ सागर को तखत पर बैठाने की कल्पना भी नहीं कर सकता था।"[2] उपन्यास का मुराद, मुसई, सागर निम्नजाती के नौजवान हैं। उन्हें बचपन से अस्पृश्यता के कारण उपेक्षा और अपमान को सहना पडा है - "मुराद और सागर के साथ ऐसी बात नहीं थी। भयावह शोषण, उपेक्षा और अपमान के बावजूद उनकी अपनी निजी-जीवन भूमियाँ थीं, जिनकी जड़ें कठोर शीत और आतप के कारण ही धरती में गहरे उतर चुकी थीं। जन्मजात परिस्थितियों से उनका इस तरह एकाकार था कि वे कभी इस बात कि कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि वे श्यामा के घर के बर्तन में कभी पानी भी पी सकते थे।"[3]

उपन्यास का सागर अस्पृश्यता की पीड़ा को भोगनेवाला पात्र है। आगे वह आश्रम का अध्यापक बनता है। वह लक्षमिनिया की पढ़ाई रोकनेवाले गोबिन

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 295
2. मार्कण्डेय - अग्नीबीज - पृ. 37
3. वही - पृ. 119

महाराज का विरोध करता है। गोबिन महाराज के वाक्यों में गाँव की रूढ मानसिकता का आभास मिलता है - "यह क्या बोल रहा है रे, तु मुसईवाले! अरे जब चमारों के सब लड़के पढ़ने जाएँगे, तब ठाकुर-बाभन का काम कौन करेगा? तेरे तोडने से वर्नासरम टूट जायेगा? पागल तो नहीं हो गया है?"[1] ऊँची जाति के लोग अपनी स्वार्थ के लिए इस व्यवस्था को बरकरार रखना चाहते हैं। गोबिन का विरोध भाई जी भी नहीं करते जो हरिजन उद्धार आयोग के संचालिका है। यह बात सागर को अंतर से तोड़ देती हैं। वह अपने विरोध जताते हुए आश्रम से अलग हो जाता है - "आखिर तो मैं हुँ एक चमार ही। वर्णश्रम धर्म के अनुसार आपने मुझे शिक्षक बना कर गलती की है। चमार को पढ़ने-पढ़ाने का अधिकार कहाँ है इस समाज में? मैं चीज़ों को ठीक-ठीक समझाना चाहता हूँ। वह राह खोजना चाहता हूँ, बहिन जी जिस पर चल कर मर भी जाऊँ तो कम से कम वर्तमान समाज की दीवार पर हल्की सी खरोंचे तो आये।"[2] सागर की लगन उच्चजाति के लिए सिरदर्द बन जाती है। आखिरकार आश्रम में आग लगायी जाती है ताकि हरिजन उद्धार बीच में ही छूट जाऐं। यहाँ मधुरेश की बात समीचीन लगती है - "गाँव की जातियों और वर्णों में घिरी-बंधी मानसिकता इसे स्वीकार नहीं कर पाती कि अछूत होकर भी सागर आश्रम के स्कूल में अध्यापक बने और उन बच्चों को पढ़ाएँ जिन्हें सवर्णों के ढोर-डंगर चराने हैं। आश्रम में आग लगाकर उसकी हत्या की कोशिश इसी सोच का परिणाम है।"[3]

---

1. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 142
2. वही - पृ. 142
3. मधुरेश - हिन्दी उपन्यास का विकास - पृ. 207

गाँव में अस्पृश्यता की भावना रूढ़ हो गयी है। आज भी वह अपनी पूरे शक्ति के साथ बरकरार है।

### 4.2.2 साधुओं पर विश्वास

ग्रामीण साधु-सन्यासियों पर गहरा आस्था रखते हैं। साधु-सन्यासियों के आशिष के जरिए वे अपने मनोकामना की पूर्ति चाहते हैं। ग्रामीणों की भक्ति का फायदा उठाकर ढोंगी बाबा लोग उनका शोषण भी करते हैं। मार्कण्डेय ने 'शव-साधना' नामक कहानी के जरिए इस तत्य का यथातथ् अंकन किया है। गाँववालों के लिए साधु-सन्यासी ईश्धर का अवतार होते हैं। कहानी का घेंचु भी घुरे बाबा को ईश्धर का दूसरा रूप मानते हैं। रोज़ बाबा के मठिया से लौटकर घेंचु अपनी पत्नी से कहता है कि - "भगवान का एक रूप ही समझो, बाबा को।"[1]

बाबा के दर्शन के लिए गाँव की बहुत सी औरतें अनेक आशाओं के साथ आती हैं - "घूरे बाबा घूम कर महिला दर्शनार्थियों की ओर देखते हैं।

- पुत्र की कामना....! बुझी हुई, भारी-भारी-सी, भूखी...

- पति की कामना....! चपल, लोलुप, पियासी...

- धन की कामना!... उदास, रहसीन, मुर्दा...

- रोग मुक्ति की कामना!... बीमार, पीली-पीली...

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 287

बाबा उखड़ जाते हैं। पद्मासन को और भी चुस्त बना लेते हैं... गये समाधि में बाबा!"[1] ग्रामीण अपनी आशा-अभिलाषाओं को लेकर बाबा की शरण में आते हैं। बाबा की शक्ति पूरे गाँव में प्रसिद्ध है - "घूरे बाबा का यह अनोखा मठ लोक प्रसिद्ध है। उनके महातम की कहानियाँ कही जाती हैं और एक नहीं पचीसों उन कहानियों के चश्म-दीद गवाह मिल जाते हैं, जो हर बात को अपने ही आगे हुई बताते हैं।"[2] घेंचू भी बाबा को आखें मूँदकर विश्वास करता है। बाबा के मायाजाल में फसे घेंचू अपनी पत्नी सुखी को भैरवी बनाने के चक्कर में बाबा के मठ में पहुँचा देता है। घेंचु बाबा के नक्शे में अंधा बन जाता है। बाबा सुखी के शरीर के भोग में लीन हो जाते हैं - "सुखी निखर आयी है। कमर की हड्डियाँ थोडी चौडी हो गयी हैं। आँखों के नीचे का अस्थि-भाग चिकना हो गया है। ....सुखी थोडा झुक कर चलती है। मदिरा का भभका चलता है, उसके घर। खाने-पीने की क्या चिन्ता, दूध से मलाई छान कर नीचे का दूध बाबा के आगे टाल देती है और बचा-खुचा हलुआ घेंचू और कुत्ते को। बाबा उससे डरते हैं। स्त्रियों को भभूत देते हुए, सुखी पर निगाह पडते ही उनका हाथ काँपने लगता है, पसीना छूटने लगता है।"[3] इसके जरिए मार्कण्डेय ने बाबा के ढोंग और अनैतिकता को उजागर किया है? साथ ही ग्रामीणों के मूर्खता पर प्रहार भी किया है।

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 289
2. वही - पृ. 292
3. वही - पृ. 293

### 4.4.3 अंधविश्वास

ग्रामीण जीवन भूत-प्रेत, शुभ-अशुभ तथा शकुन से जुडी अनेक विगलित मान्यताओं से जकड गए हैं। अंधविश्वास ने गाँव के विकास को अवरुद्ध करके रखा है। 'हलयोग' कहानी का चौथीराम कक्षा के बच्चों को पढाते वक्त उनसे अंधविश्वास को समाप्त करने का आह्वान देते हैं - "वे पढने के साथ पुरानी लगी हुई बातों की चर्चा करके हँसते और समझाते कि भला अन्धविश्वासों में जीने से क्या मिलेगा। इससे आदमी का मन कमज़ोर होता है और वह जीवन में आगे नहीं बढ़ पाता।"[1] दरअसल यह मार्कण्डेय का ही विचार है। उन्होंने अपने कथा साहित्य के जरिए गाँव के सडी-गली परंपरा का जमकर विरोध किया है।

#### 4.4.3.1 भूत-प्रेत

गाँव के लोग भूत-प्रेतों पर बहुत विश्वास करते हैं। उनके विश्वास के अनुसार आत्महत्या, कत्ल तथा दुर्घटना से मौत होने पर व्यक्ति भूत बन जाता है। ग्रामीण भूत से बहुत डरते हैं तथा उससे बचने के लिए तांत्रिकों का तावीज़ पहनते है।

गाँववालों के अनुसार भूत का वास बडा पेड़, मरघट तथा तालाब या नदी का किनारा माना गया है। मार्कण्डेय की 'शवसाधना' नामक कहानी में तालाब की चुड़ैल का वर्णन मिलता है - "बाबा रात को चुड़इनियाँ के तालाब के ऊपर पलत्थी मार कर बैठ जाते हैं और डाइनें उनके पाँव पखारती हैं। नहीं तो थी किसी की

---

1. मार्कण्डेय - हलयोग - पृ. 16

हिम्मत उधर झाँकने की रात को। गढी का छेकरा घोड़ा समेत वहीं छड़ कर मर गया। डाइनें उसके कलेजे का खून चूस कर पी गयीं।"[1]

'अग्निबीज' उपन्यास में भी चुडैल संबन्धि मान्यताओं का जिक्र मिलता है। रामपुर अंचल से आश्रम जाने के लिए बजमा नदी को पार करना पड़ता है। एक दिन श्यामा और मुराद आश्रम से लौटने में देर हो जाती है। बरसात के दिन होने के कारण नदी में पानी बढ़ गया था। रात में नदी को पार करना मुराद को खतरा लगता है। इसलिए मुराद भींट पर से पानी को एक तरह छोडकर खेत से निकलने का प्रस्ताव रखता है। श्यामा को चुडैल की याद आती है। वह मुराद को मना करते हुए कहती है - "...श्यामा और भी डरी आवाज़ में बोली, 'ना-ना, भइया। लोग कहते हैं कि भिटवा पर चुरइनें शाम ही से उतर आती हैं और तेल-फुतेल लगाकर, सिंगार-पटार करने लगती हैं।"[2]

'हलयोग' कहानी में सोमारु भूत के पकड में फंसे आदमी के हाल के बारे में कहता है - "ऐसे में कुछ ठीक नहीं रहता। प्रेत-लीला में फंसे लोग पल भर में कहाँ-से-कहाँ पहुँच जाते हैं। शम्भूलाल की बीबी को नहीं देखा। यह गयी, वह गयी कहते लोग दौडते ही रह गये और बनसती उसे उड़ा ले गयी।"[3] व्यक्ति के ऊपर से भूत-प्रेत के प्रभाव को छुडाने के लिए उन्हें ओझा या तांत्रिक के पास ले जाते हैं। उन्हें झाडु-फूंक की क्रूर यातनाओं से गुजरना पडता है। प्रस्तुत कहानी का

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 292
2. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 18
3. मार्कण्डेय - हलयोग - पृ. 19

चौथिया के ऊपर से बरम बाबा को छुडाने के लिए जोखू महानन्द झाड़-फूंक करता है - "हाथ-पाँव जोड़कर किसी तरह मनाया गया और बडी-पूजा-आरजा के बाद दोनों हाथ पीठ पर चढ़ाकर बाँधे गये और उन्हें घर लाया गया। रात-भर सारी चमरौटी पाँचू का घर घेरे बरम बाबा को मनाती बैठी रही और अन्दर महानन्द के ढोलची और जोखू जन्तरी चौथी के बकरवाने के लिए पचरी गाते और बीच-बीच में बोल-बोल की आवाज़ देकर बह्मा के मूँह पर झापड़ों की वर्षा करते रहे। ...अन्त में बोरसी भर आग में लाल मिर्च की धुकनी देकर महानन्द सोखा कोठरी से बाहर निकल आये। घण्टे भर बाद कोठरी खोली गयी। पता चला कि चौथी गहरी नींद में सो गये हैं।"[1] इस प्रकार गाँव के भूत-प्रेत के विश्वास के तहत लोगों को बहुत कुछ सहना पड़ता है।

गाँव में अक्सर बीमारी का कारण भूत का प्रभाव माना जाता है। इसलिए वे बिमारी की चिकित्सा के बजाय उसे ओझा के पास ले जाते हैं। उन लोगों का विश्वास है कि ओझा मंत्र के शक्ति से भूत को भगा देता है। 'अग्निबीज' उपन्यास का सुनीत को बुखार हो जाता है। दिन-ब-दिन बुखार चढ़ता जाता है। ऐसे में गाँव के ओझे को घर में बुलाया जाता है - "ओझा के लिए गोहरी की निर्धूम आग दी गई थी। उस पर गुग्गुर डाल कर वे कुछ बुदबुदा रहे थे। लवंग से लवंग मिला कर कहने लगे, "भइया जी डर गये हैं। फुटहवा बरम की हवा लग गयी है। मैं बाँध दूँगा। ऐसे जकड़ दुँगा कि उसको छठी का दूध याद आ जाएगा।"[2] लेकिन सुनीत

---

1. मार्कण्डेय - हलयोग - पृ. 19
2. मार्कण्डेय - अग्निबीज - पृ. 53-54

की बीमारी कम होने के बजाय बिगड़ जाती है। आखिर डाक्टर को बुलाया जाता है - "सारे गाँव में यह खबर फैलाते देर नहीं लगी कि ज्वाला बाबु लखनऊ से जीप से भागे आ रहे हैं। लखनऊ का डाक्टर भी साथ-साथ आ रहा है।"[1] डाक्टर के इलाज से सुनीत ठीक हो जाता है। यहाँ पर मार्कण्डेय का मकसद ग्रामीणों की भूत-प्रेत तथा जादू-टोना के विश्वास पर चटका देना है।

### 4.4.3.2 शकुन-अपशकुन

गाँव में शकुन-अपशकुन के संबन्ध में लोगों के बीच कई प्रकार की मान्यताऐं होती हैं। किसी बात की शुरुवात तथा कहीं बाहर जाते वक्त देखने या सुननेवाली बात से शुभ-अशुभ की निर्णय किया जाता है। बाहर जाते वक्त बिल्ली का रास्ता काटना, कानी व्यक्ति को देखना, पीछे से बुलाना आदि अपशकुन माना जाता है। पानी का भरा हुआ घड़ा, सुहागिन, गाय आदि शकुन शुभ माने जाते हैं।

मार्कण्डेय की 'कानी घोडी' कहानी में कानी घोडी की दर्शन को अपशकुन कहा गया है। सरजू साव की सेठ की घोड़ी कानी बच्ची को जन्म देती है। सेठ जी सरजु पर नाराज़ हो जाता है कि उनके लापरवाही से घोड़ी गुड़ की मंडी में गार्भिन हुई थी। इसलिए वह कानी घोडी को सरजु को सौंपकर अपशकुन से बचना चाहता है - "उन्हीं की लापरवाही से घोडी गुड़ की मंडी में गार्भिन हुई। इसलिए सेठ ने कहा, 'तुरन्त इस बच्चे को उठा कर अपने घर ले जाओ। कहीं इधर-उधर किया,

---

1. मार्कण्डेय - अग्नीबीज - पृ. 54

तो तुम्हारा काम छुड़ा दूंगा फिर तुम्हारे जैसे भुख्खड़ के लिए सगुन-असगुन क्या करेगा।"[1] दरअसल सरजू ने ही घोडी की बच्चे की आँख में सूजा गाड़ दिया है ताकि सेठ के माल की बनारस यात्रा बंद हो जाऐं और वह बच्चा उसे मिल जाए। अंधविश्वास के कारण सेठ ने ऐसा ही किया। बच्चा सरजू को मिला। बडे होने पर उसी की पीठ पर जौ-गेहूँ के नाम पर सोने-चाँदी के गहनों से भरे-बोरे लाद-लादकर सरजू अमीर बना - "...वे अलग से काम करने लगे, तो सेठ का रोज़गार मद्द पड गया और भइया दिन-दूनी-रात चौगुनी उन्नति करने लगे। जब सेठ ने उन्हें निकाला, तो कानी के हाथ-पाँव हो गये थे। वह बनारास आने-जाने लगी।"[2] इस प्रकार सेठ के लिए अपशकुन बनी कानी घोडी सरजू के लिए शुभ शकुन बन जाती है। यहाँ मार्कण्डेय ने ग्रामीणों के शकुन-अपशकुन की मान्यताओं पर व्यंग्य किया है।

### 4.4.3.3 शुभ-अपशुभ

गाँववालों प्रकृति की ओर से मिलनेवाली संकेत से शुभ-अपशुभ की बात निकालते हैं। इसके लिए वे शकुन को आधार बनाता है। शकुन बुरा बनने से उनका मन अशुभ की चिंता से ग्रस्त हो जाता है।

मार्कण्डेय की 'सहज और शुभ' नामक कहानी में ग्राम जीवन में व्याप्त शुभ-अशुभ की मान्यताओं का वर्णन मार्कण्डेय ने यों किया है - "नीलकण्ड को देखकर प्रणाम इसलिए किया जाता है कि वह शंकर की याद दिलाता है। महोप

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 444
2. वही - पृ. 444

बेचारी अपनी गलती को पूत-पूत के नारे देकर दोहराती है और ररोइया की आवाज़ भी सुनना पाप हैं; लोग अशुभ मानते हैं, कोई दुखद घटना होनेवाली है। ....बरसात में आने-वाले चपल खंजन से शरदागमन की बात तुलसीदास जैसा बेकाम का आदमी ही सोच सकता था। हमारे यहाँ तो उसे पहले-पहल देखने से शुभाशुभ निश्चित हैं। किस दिशा में देखने पर क्या भविष्य होगा, इसकी एक लम्बी सूची है।"[1] 'भूदान' कहानी लोमडी की रास्ता काटने से व्यक्ती मन में उत्पन्न अशुभ चिंता की ओर इशारा करती है। कहानी का रामजतन बनसती माई से दुआ करके लौटते वक्त एक लोमडी उसका रास्ता काटता है। तब से उसके मन अशुभ की चिन्ता से घबरा जाता है - "उसी समय एक लोमड़ी खुर-खुर कर सती के चौरे से निकली और पल भर को उसके मुँह की और देख कर बायें से रास्ता काटती हुई निकल गयी तो उसके मन में एक अशुभ की कल्पना जाग उठी।"[2]

मार्कण्डेय के कथा साहित्य इस प्रकार अनेक अंधविश्वासों की ओर ईशारा करते हैं।

**निष्कर्ष**

भारतीय संस्कृति का असली रूप ग्राम जीवन में ही देखा जा सकता है। ग्रामीण संस्कृति धार्मिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक होती है। दरअसल ग्रामजीवन में संस्कृति और धर्म के बीच खास अंतर नहीं देखा जा सकता है। ग्रामीण

---

1. मार्कण्डेय - मार्कण्डेय की कहानियाँ - पृ. 438
2. वही - पृ. 271

सामाजिक संरचना और उसके विकास में संस्कृति और धर्म का व्यापक प्रभाव रहता है। मार्कण्डेय ने अपने कथा साहित्य के जरिए ग्रामीण संस्कृति और धार्मिक जीवन की खासियत और बिगलित मान्यताओं को अभिव्यक्त किया है। प्रकृति से जुडी जिंदगी, सहयोग की भावना, पर्व एवं त्योहार, लोकगीत आदि ग्रामीण संस्कृति की खासियतों को उन्होंने उजागर किया है। उनके कथा साहित्य के मुताबिक गाँव में धर्म का स्वरूप अज्ञान और अशिक्षा के तहत विकृत हो गया है। सदियों से चले आ रही रूढ़ मान्यताओं तथा अंधविश्वास ने ग्रामीणों की मानसिकता को जटिल बना दिया गया है। मार्कण्डेय ने सांस्कृतिक एवं धार्मिक खोखलेपन का पर्दाफाश करके उसका जमकर विरोध किया है तथा उसके स्थान पर नए जीवनमूल्यों की माँग भी की है।